शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648

वर्ष - 03 अंक– 11 जुलाई - सितंबर - 2025 Impact factor– 03

पचपन खंभे लाल दीवारें उपन्यास में अभिव्यक्त स्त्री विमर्श

डॉ. श्रीमाया सी

असिस्टेंट प्रोफेसर

डिपार्टमेंट ऑफ़ हिंदी-पय्यनूर कॉलेज , एडाट, पय्यनूर - 670327

Mob : 9495868174

स्त्री विमर्श का तात्पर्य है स्त्री की चर्चा, स्त्री के प्रति समाज के नज़रिए की चर्चा। यह बहस बहुत दिनों से चल रही थी परंतु आधुनिक युग में आकर स्त्री विमर्श ने कुछ विशेष स्थान ग्रहण कर लिया है। 1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने जो "अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष" मनाने का उद्घोष किया, इसको अपने संकल्प के अनुरूप मनाया भी गया" । स्त्री जीवन के विविध आयाम सामने आये और विश्व के श्रेष्ठसाहित्यकारों द्वारा इसे अपने लेखन का विषय बनाया गया। परंपरागत साहित्य में 'स्त्री विमर्श' ने अपना नया रूप प्राप्त किया। हिंदी साहित्य जगत में स्त्री पर चर्चा, स्त्री की स्थिति पर चर्चा बहस के रूप में प्रारंभ हुई। अतः स्त्री विमर्श से जुड़ी हर स्त्री मुख्यतः एक ऐक्टिविस्ट ही है।

आधुनिक युग की कथा लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का नाम अग्रणी है। उषा प्रियंवदा प्रवासी हिंदी साहित्यकार है। हिंदी कथा लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का अपना अलग महत्व है। उषा प्रियंवदा का जन्म 24 दिसंबर 1930 में कानपुर में हुआ। इनकी आरंभिक शिक्षा भी यही हुई। बचपन से ही साहित्य के प्रति उनका झुकाव था। उषा प्रियंवदा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए तथा पी.एच.डी की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन किया ।

उषा जी के कथा साहित्य में शहरी परिवारों के बड़े ही मार्मिक चित्र है और आधुनिक जीवन की उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन करने में उन्होंने अत्यंत गहरे यथार्थबोध का परिचय दिया है।

प्रमुख कृतियाँ हैं-

कहानी संग्रह- ज़िंदगी और गुलाब के फूल', 'एक कोई दूसरा', 'मेरी प्रिय कहानियाँ'

उपन्यास- 'पचपन खंभे लाल दीवारें', 'रुकोगी नहीं राधिका', 'शेष यात्रा','अंतर्वंशी', 'भया कबीर उदास','नदी' ।

उषा प्रियंवदा की गणना हिंदी के उन कथाकारों में होती है, जिन्होंने आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की स्थिति को अनुभूति के स्तर पर पहचाना और व्यक्त किया है।

'पचपन खंभे लाल दीवारें उषा प्रियंवदा का पहला उपन्यास है, जिसमें एक भारतीय नारी की सामाजिक-आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण हुआ है। नारी का शोषण हर युग में हर समाज में प्रकारान्तर से होता रहा है, चाहे वह धर्म के द्वारा, समाज और अपने परिवार के द्वारा। आर्थिक विवशताएं इस हद तक नारी को शोषित करती हैं कि आर्थिक स्वावलंबन ही स्वयं के लिए घातक हो जाता है।

उपन्यास की नायिका सुषमा अपने परिवार की सबसे बडी और कमाऊ पुत्री है। पिता अशक्त है। अतः पूरे परिवार के पालन-पोषण का भार उसी पर है। वह एक कॉलेज अध्यापिका है। उसमें उत्साह है, जिजीविषा है, उत्कंठा है परंतु परिवार की सुख-सुविधा उसकी प्राथमिकता है। पर सुषमा दायित्वों की दीवारों से घिरी हुई है और इन सबके चलते वह अपने व्यक्तिगत सुख को तिलांजलि दे देती है। छोटे भाई-बहिनों का पालन, शिक्षा और अपने पद की गरिमा उसके जीवन में सूनापन भर देती है। परिणामस्वरूप वह स्वयं को नितांत एकाकी अनुभव करती है।सुषमा दिल्ली विश्वविद्यालय के एक गर्लस कॉलेज में लक्चरर सुषमा एक ज़िम्मेदार पद पर है और इस पद से वह स्वयं गौरवान्वित है। "सुषमा ने मेज़ पर रखी पीतल की तख्ती पर फिर एक बार उँगली फेरी। नई चमकती तख्ती पर उसके नाम के अक्षर उभरे हुए सुषमा को अपना नाम अनायास ही बहुत मीठा और संगीतमय लग आया "। "नेम प्लेट जड दी गई थी मिस एस. शर्मा एम.ए वार्डन गर्लस हॉस्टल। अपने नाम के आगे इतनी बडी पूँछ देखकर उसे बड़ा विचित्र सा लगा" ।

पद की आनन्दानुभूति का एक कटु पक्ष यह भी है कि वह दायित्वों के चक्रव्यूह से निकल नहीं पाती और अपना विवाह भी नहीं करती। सुषमा का पूरा परिवार आर्थिक रूप से पूरी तरह उस पर आश्रित है और वह हर संभव तरह से उससे लाभ ही लेना चाहते है। हर कोई उससे बस अपने ही फायदे की बात करता है। यहाँ तक कि उसकी माँ भी। वह सुषमा के माथे पर सारा कर्ज़ मढ़कर छोटी बेटी नीरू की शादी करवाती है। लेकिन कभी भी उसकी शादी की बात नहीं करती है। वह भी अपना संसार बसाना चाहती है। पति और बच्चे चाहती है। लेकिन पैसे की लालच में घरवाले उसकी शादी नहीं करना चाहते है।

इन्हीं दिनों उसके एकांत और अकेलेपन में कुछ हलचल होती है। उसकी ज़िंदगी में 'नील' का प्रवेश होता है। सुषमा का मन मयूर नाच उठता है, उसके मन एवं शरीर में एक नवीन चेतना का संचार होता है। सुषमा की मौसी ने उसके लिए कढ़ी हुई साड़ियाँ भेजी थी। नील ही उन्हें लेकर आया था।

कौशल्या जी के साथ (सुषमा की मौसी) नील को देखकर उसे मन में हल्का सा विस्मय हुआ। सुषमा की कौशल्या मौसी का परिचित व्यक्ति है - नील। जब नील दिल्ली पहुँचा, तब सुषमा का पता लगाकर उसके कॉलेज जाकर साडियाँ उन्हें देता है। उन दोनों के बीच मुलाकात होती है। नील फिलिप्स में काम करता है।

सुषमा से मुलाकात हो जाने के बाद वह दोनों अक्सर मिलते रहे। धीरे-धीरे नील के मन में सुषमा के लिए अजीब सा एहसास होने लगा। वह सुषमा के साथ बहुत सारा समय बिताने लगा। यह दोनों बहुत सारी बातें आपस में करने लगे। सुषमा की हर बातें, हर व्यवहार नील को पसंद था। धीरे-धीरे नील के मन में सुषमा के साथ सदा वक्त बिताने का मोह पैदा होने लगा। नील उसे अपनी ज़िंदगी का हिस्सा बनाना चाहने लगा। सुषमा का व्यक्तित्व, समझदारी, उत्तरदायित्व, सबके प्रति नील का आदर था।

नील एक ऐसा व्यक्ति था, जो सदा सुषमा को समझने का उसे हर तरीके से जानने का प्रयास करता था। जब भी सुषमा उससे बात करने लगती है तब से नील सुषमा की हर बात से उसको समझने की कोशिश करता रहता है। सुषमा को पूरी तरह समझना चाहता है।

सुषमा का चरित्र एक ऐसी नारी का चरित्र है जो पारिवारिक ज़िम्मेदारियों से इतना घिर गई है कि उस चक्रव्यूह से निकलने के सभी रास्ते बंद हो गए हैं। सुषमा ने भाई-बहिनों के कारण अपने को मिटा दिया। उषा प्रियवंदा जी ने उसको एक ऐसी नारी के रूप में चित्रित किया है जो सक्षम होते हुए भी ओढ़ी हुई ज़िम्मेदारियों के आगे विवश है। उसमें भी जीने की चाह है, वह भी अन्य नारियों की

भाँति अपना घर - संसार चाहती है। परंतु ऐसी विवश है कि वह अपने को किंकर्तव्यविमूढ़ सा पाती है।

नील के जीवन में प्रवेश से सुषमा को प्रसन्नता तो मिली परंतु परंपराओं, आदर्शों में वह इतना विश्वास करती थी कि उससे विवाह नहीं कर सकती थी क्योंकि वह नील से 5 वर्ष बड़ी थी और उसका मानना था कि उम्र का यह अंतराल उसके वैवाहिक जीवन के बिखराव का कारण बन सकता है जबकि नील उससे विवाह करना चाहता था। कॉलेज में दशहरे की छुट्टी के संदर्भ में सुषमा को किसी विशेष कारणवश रुकना पड़ा। वह हॉस्टल में बिल्कुल अकेली थी चौकीदार भी छुट्टी पर गया हुआ था। सांयकाल वह कॉलेज के लॉन में अकेली बैठी थी। अचानक नील वहाँ आता है। बातचीत के बीच चुप बैठी सुषमा को देखकर नील ने कहा- "आप तो चुप बैठी हैं। अपने बारे में कुछ बताइए। मैं आपके बारे में कुछ नहीं जानता सिवा इसके कि आप मुझे बहुत अच्छी लगती है"।

अपने को पीड़ा देने की भावना से प्रेरित हो, अपने स्वप्नों को रौंदते हुए सुषमा ने कहा- "उम्र तैंतीस बरस, घर की गरीब, हिंदी की टीचर और कुछ जानना चाहते है?" नील की ओर मुँह मोड़ कर सुषमा ने कहा- "प्लीज लीव मी एलोन"

उषा प्रियंवदा जी ने इस उपन्यास के माध्यम से ऐसी नारी का चित्रण किया है, जो कर्म दूसरों के लिए कर रही है और परिवार सुषमा की मनोभावनाओं को बिना समझे उसके पैसे से, उसके त्याग से लाभ उठा रहा है और यहाँ तक कि उसकी माँ भी उसके भविष्य के लिए तनिक भी चिंतित नहीं है।

सुषमा की बहन नीरू को देखने वाले आ रहे हैं। माँ बेटी को लेकर सुषमा के पास अचानक आ जाती है और अपना मंतव्य व्यक्त करती है। सुबह से तैयारी हो रही है। क्या बाज़ार से आयेगा, क्या घर में बनेगा। नीरू को कौन सी साड़ी पहनाई जाय और माँ ने वह साड़ी नीरू को पहना दी जो नील लाया था। सुषमा इससे आहत गई। माँ से बातचीत होने के बाद सुषमा ने जिद में सादी साड़ी ही पहनी - अम्मा के बहुत आग्रह पर भी वह न मानी।

"सुषमा ने हाथ बढ़ाकर नीरु को चाय का प्याला पकड़ाया काँपते हुए हाथों से नीरू ने उसे पकड़ना चाहा पर सारी चाय उसकी साड़ी पर जा गिरी और प्याला फर्श पर गिरकर छोटे- छोटे टुकड़ों में बिखर गया। अम्मा सन्न रह गई। नीरू को देखने के लिए आए लोगों को ये सब अच्छा नहीं लगा। अम्मा को निराशा के गहरे गर्त में डालकर वे लोग चले गए। उनका घुटता हुआ क्रोध सुषमा पर निकला।

"तुम्हीं ने साड़ी की बात पर कुहराम मचा कर नीरू का मूड खराब कर दिया। उन्होंने तुम्हें देखकर क्या समझा होगा? हाथ कान खाली, रद्दी सी साडी पहन कर बैठ गई। अपना स्टैन्डर्ड भी तो दिखाना था ऐसे मौकों पर लोग माँगकर पहनते हैं, पर तुम कुढन में जो था वह भी नहीं पहना"| सुषमा भी खूब नाराज़ हो गई तुमने मुझे बहुत सारा गहना गढ़ा दिया है न, जो पहन लेती तुमने पहन तो ली थी न भारी - सी ज़ंजीर, बस देख लिया होगा उन लोगों ने। कहते-कहते उसका गला भर आया और उसकी आंखें बड़े-बड़े आँसुओं से भर उठी"|

यहाँ लेखिका ने यह दिखाया है कि पूर्णरुपेण परिवार पर समर्पिता सुषमा से परिवार वाले भी असंतुष्ट है। सुषमा की ईमानदारी को भी अपनी इच्छा पूर्ति के लिए बेच देना चाहती है, उसी की माँ। सुषमा की सुविधा, उसके सम्मान की उसे कोई परवाह नहीं है।

सुषमा एक ऐसे दलदल में फंस चुकी है जहाँ से वह निकल ही नहीं सकती। परिस्थितियों से प्रताडित, विवाह सुख में वंचित कुमारी की अंतर्वेदना इस उपन्यास का मुख्य विषय रहा है। सुषमा जीना चाहती है। नील के सान्निध्य से वह प्रसन्न है। प्रारंभ में तो उसे केवल कुछ क्षण अच्छे बीते, यही लगता था परंतु वह नील से कब जुड़ गई स्वयं नहीं जान पाई। नील उसे प्रिय था। नील को सुषमा तहेदिल से प्रेम करती है परंतु वह अपनी विवशताओं के आगे अपना प्रेम, अपनी खुशियाँ, अपना जीवन सभी को दूसरा स्थान देती है। वह अपने पारिवारिक दायित्वों के वहन में अपने वैयक्तिक भावनाओं और प्रेम की बलि चढा देती है।सुषमा के मानसिक अंतर्द्वन्दव, कर्तव्य और भावना के संघर्ष, अतृप्ति, अशांति आदि मनोभावों का मनोवैज्ञानिक चित्रण उषा प्रियंवदा जी ने सफलतापूर्वक किया है। इसके साथ हमारे समाज की ओर भी अपना विचार व्यक्त करती है जहाँ कमाऊ पुत्री एक माध्यम बन जाती है जो परिवार का पालन करें।

जिम्मेदार माता- पिता सारा बोझ बेटी या बेटे के कंधों पर डाल दें। इस प्रकार संतान का जीवन स्वयं के लिए अभिशाप बना देते हैं। सुषमा की सहेली मीनाक्षी हर परिस्थिति में उसको सहारा देने में तैयार है। वह मीनाक्षी से कहती है कि वह नील को स्वीकार करने का साहस नहीं रखती। "अपने को कमज़ोर पाती हूँ..... आज सोलह साल के बाद शायद तुम अपनी बेटी को लेकर इस कॉलेज में आओ, तब भी मुझे यहीं पाओगी कॉलेज के पचपन खंभों की तरह स्थिर अचल"

इस उपन्यास में आधुनिक जीवन की विडंबना के मार्मिक पक्ष का प्रस्तुतीकरण है जो हम नहीं चाहते वही भोगने और करने को विवश हो जाते है।

सुषमा रूढ़िवादी नारी है, वह त्यागमयी नारी के रूप में चित्रित है। यहाँ उपन्यास की नायिका सुषमा प्रेम की त्रासदी भी झेल रही है। इसमें परिवार की ज़िम्मेदारियों का वहन करना उसकी त्रासदी है, विवशता है। उसकी बाध्यता उसे अपनी कामना प्राप्त नहीं करने देती।

संक्षेप में मेरा विचार यह है कि 'पचपन खंभे लाल दीवारें' श्रीमती उषा प्रियंवदा द्वारा लिखा गया एक महिला केंद्रित उपन्यास है। यह उपन्यास एक लड़की के अपने परिवार के लिए किए गए बलिदानों को बेहद मार्मिक रूप में चित्रित करता है। यही नहीं, यह उपन्यास भारतीय महिलाओं के जीवन के अलग-अलग मुद्दों पर प्रकाश डालता है। छात्रावास के 'पचपन खंभे और लाल दीवारें' उन परिस्थितियों के प्रतीक हैं जिनमें रहकर सुषमा को ऊब तथा घुटन का तीखा एहसास होता है, लेकिन फिर भी वह उससे मुक्त नहीं हो पाती। शायद होना चाहती... सुषमा एक स्वावलंबी और आत्मविश्वासी महिला है। इसके अलावा वह अपने घर की आय का एकमात्र साधन है। पूरे परिवार की ज़िम्मेदारिया उसके ऊपर है। नए ज़माने की एक स्वावलंबी स्त्री किस तरह समाज से त्रस्त रहती है, पूरी तरह से अत्मनिर्भर होने के बाद भी समाज में वह अपने फैसले खुद नहीं ले सकती। समय बदला, औरतों के रहने का तरीका बदला मगर समाज की सोच नहीं बदली। उपन्यास के अंत में सुषमा परिस्थितियों में ऐसी उलझती है कि पचपन खंभे और लाल दीवारों से बने लड़कियों के हॉस्टल में बंदिनी का जीवन व्यतीत करती है।

****

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. पचपन खंभे लाल दीवारें- उषा प्रियंवदा
2. स्त्री विमर्श का लोकपक्ष - अनामिका
3. समकालीन लेखिकाओं के उपन्यासों में स्त्रीविमर्श - डॉ. महेन्द्र रघुवंशी